भारतीय संस्कृति और मानव मूल्य

डॉ0 युवराज सिंह
हिन्दी विभाग
आर0बी0एस0 कॉलेज, आगरा।
Email – yuvrajrbs@gmail.com

संस्कृति एक बहुत ही विशुद्ध और व्यापक शब्द है। विभिन्न दृष्टिकोणों से इस शब्द को परिभाषित किया गया है। संस्कृति का शाब्दिक अर्थ है 'संस्कार' जिसका अर्थ है। 'मानव' जीवन को सजाना और सवांरना अर्थात जीवन को परिमार्जित करने हेतु विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजरना ही संस्कृति है। संस्कृति बाहर से दिखाई देने वाली चीज नहीं है वह अतः व्याप्त होती है। मूलरूप से हमारा ब्राह्य व्यवहार ही हमारी संस्कृति का द्योतक है।

जब हम भारतीय संस्कृति की बात करते हैं तो ज्ञात होता है कि भारत को कभी विश्वगुरू का दर्जा प्राप्त था। सम्पूर्ण विश्व को सांस्कृतिक शिक्षा प्रदान करने का श्रेय भारतवर्ष को जाता है।

हमारी सांस्कृतिक विरासत अति प्राचीन है। व्यक्ति संस्कृति का निर्माता है। उसने अपने चिंतन, मनन, एवं अनुभव के आधार पर संस्कृति का विकास किया है। इस संस्कृति में समाजगत व्यवहार, संचितज्ञान, लोकल मान्यताऐं, विश्वास, एवं मानव निर्मित समस्त भौतिक वस्तुऐं समाहित हैं।

भारतीय संस्कृति की जडें इतनी गहरी हैं कि इस संस्कृति को विदेशी आक्रांताओं द्वारा नष्ट करने से सारे प्रयास विफल रहे।

यूनान, मिश्र, रोम सब मिट गये जहाँ से।
बाकी मगर है अब तक नामो–निशां हमारा।।
कुछ बात है कि हस्ती, मिटती नहीं हमारी।
सदियों रहा है दुश्मन, दौर–ए–जहाँ हमारा।।

भारतीय संस्कृति एक ऐसा वटवृक्ष है जिसकी जडें बहुत गहरी हैं कोई भी सभ्यता और संस्कृति इस देश के मूलभाव को नष्ट नहीं कर सकी। इसका प्रमुख कारण है भारतीय संस्कृति का आध्यात्मिक स्वरूप। "भारतीय संस्कृति परम्परा प्राप्त आध्यात्मिक संस्कृति है, जिसमें वैयक्तिक निःश्रेयस तथा सामाजिक अभ्युदय दोनों का समन्वय हुआ है। इनमें से किसी एकांकी की अवहेलना नहीं की जा सकती। अध्यात्म की उपादेयता उसकी सर्वांगीणता में है, न कि संकीर्णता में"[1]

भारत एक विविध संस्कृति वाला देश है। अनेकता में एकता ही भारत का मूलमंत्र रहा है। यह विश्व का एकमात्र ऐसा देश है जिसमें संस्कृति के विविध रंगों की छटा दृष्टिगत होती है। जाति की विविधता, भाषा की विविधता, पहनावे की विविधता, खान–पान

की विविधता, धर्म सम्प्रदायों की विविधता, रीति–रिवाजों की विविधता, लोक मान्यताओं की विविधता, रूप–रंग की विविधता आदि के होते हुए भी सांस्कृतिक दृष्टि से सम्पूर्ण देश एकतारूपी मोती की माला में पिरोया हुआ प्रतीत होता है जिसके पीछे हमारे अन्तःपुर में छिपे हुए वह मानव मूल्य हैं जो हमेशा से विघटनकारी ताकतों को अपनी मजबूत मनोभावों की जंजीरों में जकडे रहते हैं।

डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दो में– "मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएं ही संस्कृति है। संस्कृति उस अवधारणा को कहते हैं, जिसके आधार पर कोई समुदाय विशेष जीवन की समस्याओं पर दृष्टि–निरपेक्ष करता है, किसी समुदाय की अनुभूतियों के संस्कारों के अनुरूप है उसकी संस्कृति किसी समुदाय, जाति, देश अथवा राष्ट्र का प्राण या आत्मा होती है।"[2]

अतः उदारीकरण का नाम ही संस्कृति है। जिसके पीछे भारतीय ऋषि–मुनियों, साहित्यकारों, समाज सेवियों का यह भाव है कि पृथ्वी मेरी माता है और सम्पूर्ण विश्व मेरा परिवार है अर्थात– 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का अक्षय भाव ही भारतीय संस्कृति को संजीवनी शक्ति प्रदान करता रहा है।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामय" की कामना ही भारतीय संस्कृति का प्राण तत्व है।

"भारतीय संस्कृति में पृथकत्व का लेशमात्र भी नहीं है, क्योंकि वह आध्यात्मिकता की अमर आधारशिला पर आधारित है।"[3]

–स्वामी विवेकानन्द

इसलिए भारतीय संस्कृति महान और अमर है। भारतीय संस्कृति विभिन्न संस्कृतियों का मिश्रण है। क्योंकि संस्कृति का विकास परस्पर आदान–प्रदान से होता है। "संसार में शायद ही कोई ऐसा देश हो जो यह दावा करे कि उस पर किसी अन्य देश की संस्कृति का प्रभाव नहीं पड़ा है। इसी प्रकार कोई जाति भी यह नही कर सकती कि उस पर किसी दूसरी जाति का प्रभाव नहीं है।"[4]

अर्थात किसी व्यक्ति के सम्पर्क में आने से ही हमारे आचार–विचार बदल जाते हैं। यथा–

"सठ सुधरहिं सतसंगति पाई।
पारस परस कुधात सुहाई।।
बिधि बस सुजन कुसंगत परही।
फनि मनि समनिजगुन अनुसरहीं।।"[5]

संस्कृति एवं मानव मूल्य एक दूसरे के पूरक प्रतीत होते हैं जहाँ तक मेरा विचार हैं मानव मूल्य ही संस्कृति को पोषण प्रदान करते हैं। उच्च मानव मूल्यों की स्थापना ही समाज को संस्कार प्रदानक करती है और जब समाज संस्कारित होता है तो संस्कृति अपने आलोक से सम्पूर्ण समाज को आभायुक्त बना देती है।

जीवन के प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में मूल्य शब्द किसी न किसी अर्थ में प्रयुक्त होता रहा है। जिसका अर्थ है किसी वस्तु के विनिमय में दिया जाने वाला धन, दान अथवा कीमत। मूल्य वस्तुतः अर्थशास्त्र का शब्द है जो हिन्दी में अंग्रेजी के (Value) वेल्यू शब्द के पर्याय के रूप में प्रयुक्त होता है।

डॉ0 नगेन्द्र के अनुसार– "मानदण्ड और मूल्य आदि शब्द मूलतः साहित्य के शब्द नहीं हैं। अर्थशास्त्र में किसी भी वस्तु की क्रय शक्ति मूल्य कहलाती है किसी भी वस्तु का मूल्य इसलिए दिया जाता है क्योंकि उसमें समाज या व्यक्ति की आवश्यकताओं को पूर्ण करने की क्षमता होती है। अतः मूल्यों का सीधा सम्बन्ध मानव जीवन से होता है।"[6]

सब मूल्यों का स्रोत मानव मस्तिष्क एवं मानव चिंतन ही है। जब व्यक्ति 'मेरे' से ऊपर उठता है, समाज एवं विश्व के निमित्त चिंतन करता है, तब आध्यात्मिक स्तर पर वह समाज को कुछ देने का प्रयास करता है। मानव जब तक लोभ, लालच, मोह–माया के वशीभूत रहता है, तब तक वह लेना ही चाहता है, जब सांसारिक अनासक्ति का भाव जाग्रत होता है तब यह चिंतन होता है कि 'मैंने संसार को क्या दिया'? यह भाव अंतर्मन में जाग्रत होते ही हमारे श्रेष्ठ मानव मूल्य जाग्रत अवस्था में आ जाते हैं। तब यह विचार पुष्ट होता है।

"परहित सरिस धरम नहिं भाई।
परपीड़ा सम नहिं अधमाई।।

अर्थात परोपकार से उत्तम कोई कर्म नहीं और परपीड़ा से बढ़कर कोई नीच कर्म नहीं अर्थात पर दुःख कातरता का भाव हमारे मानव मूल्यों को उच्चादर्श की स्थिति में ले जाने का काम करता है।

मनुष्य ने अपनी सभ्यता और संस्कृति के आरम्भ से ही सहकारी प्रवृति निहित है। उसने प्रारम्भ से ही दूसरों के दुःख–दर्द को अपना समझा है और सामूहिक स्तर पर सम्मिलित रूप से उसे दूर करने की कोशिश की है।

"मानव मूल्य हमेशा आदर्श होते हैं यथार्थ में उन्हें ग्रहण नहीं किया जा सकता है।"[7]

डॉ0 धर्मवीर भारती के अनुसार–"मूल्य समाज संस्कृति में जो सम्बन्धित है हालांकि मूल्य व्यक्ति की इच्छाओं और आकांक्षाओं और अनुभूतियों से संपृक्त वह तत्व है जो अंततोगत्वा मनुष्य के वैयक्तिक जीवन में ही पनपते हैं और उनका विकास व्यक्ति के समूच्या समाज की ओर होता है।"[8]

इस प्रकार मानव व्यवहार उसके अनुभव समाज तथा संस्कृति के साथ जुड़े हैं, इन सब के बिना मूल्यों की कल्पना भी संभव नहीं है।

इस अर्थ प्रधान युग में मानव मूल्यों के विघटन की समस्या भारतीय संस्कृति के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। वर्तमान में भारतीय संस्कृति सांस्कृतिक प्रदूषण से ग्रसित है। भारतीय संस्कृति की नींव कहे जाने वाले मानव मूल्य क्षमा, दया, ममता, वात्सल्य, प्रेम, त्याग, नैतिकता, मर्यादा, चरित्र आदि का तेजी से हिरास हो रहा है। आधुनिकता की दौड़

में प्रतिभागी बना भारतीय समाज मर्यादा एवं नैतिकता की सीमाएँ लाँघने में कोई परहेज नहीं कर रहा है।

यथा–

"भारतीय चिंतन प्रणाली में 'अर्थ' को एक पुरूषार्थ के रूप में माना गया है परन्तु वह परम मूल्य नहीं था। आज इसे भ्रमवश परम मूल्य माना जाने लगा है। आर्थिक मूल्य उच्चतर मूल्यों का साधन होते हैं वहाँ उच्चतर मूल्यों का ह्रास होने लगता है।[9]

एक परिवार में शुरू होने वाले मानव मूल्यों का स्पर्श सम्पूर्ण राष्ट्र से होता है, परिवार समाज की सबसे छोटी इकाई है। मानव मूल्यों का पहला पाठ परिवार से ही शुरू होता है। यदि परिवार के सभी सदस्य मूल्यहीन हो जाये तो एक आदर्श एवं मानव मूल्य संपन्न परिवार की कल्पना नहीं की जा सकती। ऐसे समाज में एक समुन्नत मानव मूल्य सम्पन्न राष्ट्र की परिकल्पना कैसे की जा सकती है पारिवारिक मूल्य ही हमें सीधे–सीधे राष्ट्रीय मूल्य से जोड़ने का काम करते हैं।

राष्ट्रीय मूल्यों का अर्थ राष्ट्र की स्वतंत्रता, एकता, अखंडता, समृद्धि एवं विकास से है। राष्ट्रीय मूल्य सीधे–सीधे देश भक्ति से जुड़े हुए होते हैं। अपने देश की समस्याओं को दूर करना एवं देशहित में कार्य करना ही राष्ट्रीय मूल्य हैं। राष्ट्रीय मूल्यों की भावना से ओत–प्रोत राष्ट्र ही शक्तिशाली एवं समृद्धि सम्पन्न राष्ट्र बनता है।

यथा–

"स्वतंत्रता की यह अद्भुत विशेषता है कि वह अपने आप में कोई मूल्य नहीं है, वह मनुष्य की जैविक जरूरत है जो मानवीय मूल्यों को जन्म देती है। न्याय, लोकमन, सौन्दर्य की भावना, प्रेम में सब मूल्य हैं जो केवल मनुष्य में समाहित स्वतंत्रता के कारण जीवित रहते हैं और इसके न रहने पर मुरझा जाते हैं।[10]

इस प्रकार से सदैव मानव मूल्यों ने भारतीय संस्कृति को प्रभावित किया है। भारतीय समाज के मानव मूल्य ही भारतीय संस्कृति के प्राण तत्व है। मानव मूल्य सम्पन्न ऐसी प्रतिभायें भारत–भूमि पर सदा अवतरित होती रही हैं जिन्होंने भारतीय संस्कृति के रक्षा–कवच का काम किया है,

यथा–

"नानक, कबीर, सूर, तुलसी, मीरा, रहीम, रसखान, समकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गाँधी, मदर टेरेसा आदि भारतीय संस्कृति एवं मानव मूल्यों की संरक्षा हेतु समय–समय पर अवतरित होते रहे हैं।"

निष्कर्षतः भारतीय संस्कृति एवं मानव–मूल्य एक दूसरे के पूरक हैं। मानव मूल्यों के बिना दैदीप्यमान भारतीय संस्कृति की कल्पना संभव नहीं है। अनेकता में एकता एवं मानव–मूल्य विचार धारा से सम्पन्न भारतीयता ही, भारतीय संस्कृति का प्राण है, सत्यं–शिव–सुन्दरम् की भावना से ओत–प्रोत भारतीय चिंतन है भारतीय संस्कृति का संवाहक है।

संदर्भ सूची–

1. भारतीय समाज एवं संस्कृतिः परिवर्तन की चुनौती पृ0 175, सम्पादक–सत्यप्रकाश मिश्रल, रिजवानुल्ला शास्त्री विश्वविद्यालय, प्रकाशन, वाराणसी।
2. व्यक्तित्व विकास–डॉ0 राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, पृ0 199, उपकार प्रकाशन, आगरा।
3. व्यक्तित्व विकास–डॉ0 राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, पृ0 200, उपकार प्रकाशन, आगरा।
4. संस्कृति क्या है– रामधारी सिंह दिनकर, गद्य संकलन, पृ0 96
5. श्री रामचरितमानस–बालकाण्ड, पृ0 42
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास– डॉ0 नगेन्द्र, पृ0 42
7. लहर–पत्रिका, गिरिजा कुमार माथुर, पृ0 3
8. मानव मूल्य और साहित्य–धर्मवीर भारती, पृ0 32
9. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन–डॉ0 देवराज, पृ0 167
10. कला का जोखिम–निर्मल वर्मा, पृ0 52–53